शिवमानसपूजा

बाह्यपूजा को सहस्त्रोंगुना अधिक महत्त्वपूर्ण बनाने के लिये व्यक्ति को मानस-पूजा करनी चाहिये। मुद्गल पुराण के अनुसार पहले मानसिक पूजा के पश्चात् बाह्य-पूजा करनी चाहिये। परन्तु सुविधानुसार मानसपूजा बाह्यपूजा से पहले या बाद में कभी भी की जा सकती है।

कृत्वादौ मानसीं पूजां ततः पूजां समाचरेत्। (कल्याण, शिवोपासनांक, पृ. 207)

मनःकल्पित एक फूल करोड़ों बाह्य फूलों के बराबर होता है। नारदजी इन्द्र को बतला रहे हैं कि-

बाह्यपुष्पसहस्त्राणां सहस्त्रायुतकोटिभिः।।
पूजिते यत्फलं पुंसां तत्फलं त्रिदशाधिप।
मानसेनैकपुष्पेण विद्वानाप्नोत्यसंशयम्।
तस्मान्मानसमेवातः शस्तं पुष्पं मनीषिणाम्।। (वीरमित्रोदयः पूजाप्रकाशः पृ. 57)

अर्थात्-करोड़ों बाह्य-पुष्पों के चढ़ाने से जो फल प्राप्त होता है वही फल एक मानसिक पुष्प चढ़ाने पर प्राप्त होता है। इसीलिये विद्वानों ने मानस-पुष्प को श्रेष्ठ माना है।

न केवल मानस-पुष्प के बारे में उपर्युक्त बातें सत्य हैं अपितु यही बात मानस-चन्दन, धूप, दीप तथा नैवेद्य आदि के बारे में भी सत्य है। अर्थात् बाह्य पूजन-सामग्री की तुलना में मानसिक सामग्री का मूल्य करोड़ गुना होता है। अतः बाह्य-पूजा की अपेक्षा मानसिक पूजा भगवान् शिव को ज्यादा संतोष देनेवाली है। वस्तुतः भगवान् को किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं है, वे तो भाव को देखते हैं। अगर हम बिना भाव के अपना सर्वस्व अर्पित कर दें तो भी भगवान् प्रसन्न नहीं होंगे।

सर्वस्वमपि यो दद्यात् शिवे भक्तिविवर्जितः।
न तेन फलभागी स्याद्भक्तिरेवात्र कारणम्।। (वीरमित्रोदयः पूजाप्रकाशः पृ. 221)

संसार में ऐसे दिव्य पदार्थ उपलब्ध नहीं हैं जिनसे परमेश्वर की पूजा हो सके, इसलिये शास्त्रों में मानस-पूजा को ज्यादा महत्त्वपूर्ण माना गया है। मानस-पूजा में भक्त अपने इष्ट साम्बसदाशिव को सुधासिन्धु से आप्लावित कैलास-शिखर पर कल्पवृक्षों से आवृत्त कदम्ब-वृक्षों से युक्त मुक्तामणिमण्डित भवन में चिन्तामणि से निर्मित सिंहासन पर विराजमान कराता है। स्वर्गलोक की मन्दाकिनी गंगा के जल से अपने आराध्य को स्नान कराता है, कामधेनु गौ के दुग्ध से पंचामृत का निर्माण करता है। वस्त्राभूषण भी दिव्य एवं अलौकिक होते हैं। पृथ्वीरूपी गंध का अनुलेपन करता है। अपने आराध्य के लिये कुबेर की पुष्पवाटिका से स्वर्णकमलपुष्पों का चयन करता है। मानस-पूजा भावना से वायुरूपी धूप, अग्निरूपी दीपक तथा अमृतरूपी नैवेद्य भगवान् को अर्पण करने की विधि है। इसके साथ ही त्रिलोकी की सम्पूर्ण वस्तु, सभी उपचार, सच्चिदानन्द प्रभु के चरणों में भावना से

भक्त अर्पण करता है। यह है मानसपूजा का स्वरूप। इसकी एक संक्षिप्त विधि[1] – पुराणों एवं शास्त्रों में इस प्रकार वर्णित है –

'ॐ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं परिकल्पयामि'

इस मन्त्र का चिन्तन करते हुए मानसिक रूप से कहें प्रभो! मैं पृथ्वीरूप गंध (चन्दन) आपको अर्पित करता हूँ।

'ॐ हं आकाशात्मकं पुष्पं परिकल्पयामि।'

इस मन्त्र का मानसिक उच्चारण करते हुए मानसिक रूप से कहें – प्रभो! मैं आकाशरूप पुष्प आपको अर्पित करता हूँ।

'ॐ यं वाय्वात्मकं धूपं परिकल्पयामि।'

इस मन्त्र की मानसिक धारणा करते हुए मन में चिन्तन करें – प्रभो! मैं वायुदेव के रूप में आपको धूप प्रदान करता हूँ।

'ॐ रं वह्न्यात्मकं दीपं दर्शयामि।'

इस मन्त्र के मानसिक चिन्तन के साथ यह कहें – प्रभो! मैं अग्निदेव के रूप में आपको दीपक प्रदान करता हूँ।

'ॐ वं अमृतात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि।'

इस मन्त्र का चिन्तन करते हुए यह धारण करें – प्रभो! मैं अमृत के समान नैवेद्य आपको निवेदित करता हूँ।

'ॐ सौं सर्वात्मकं सर्वोपचारं समर्पयामि।'

इस मन्त्र का चिन्तन करते हुए इस प्रकार की भावना करें – प्रभो! मैं सर्वात्मा के रूप में संसार के सभी उपचारों को आपके चरणों में समर्पित करता हूँ।

इस प्रकार उपर्युक्त मन्त्रों से भावना – पूर्वक मानसपूजा करनी चाहिये। उपर्युक्त मन्त्रों से मानस पूजा करने के उपरान्त शंकराचार्य विरचित 'शिवमानसपूजा' स्तोत्र* का अर्थ चिन्तन करते हुए पाठ करें। तदनन्तर 'शिवापराधक्षमापनस्तोत्रम्'* का पाठ करें।

मानसपूजा से चित्त एकाग्र एवं सरस हो जाता है। यद्यपि इसका प्रचार कम है, तथापि इसे अवश्य अपनाना चाहिये।

---

1. यहाँ पर जो विधि दी जा रही है उसी प्रकार की विधि 'आचारेन्दुः' (पृ. 130) तथा 'अनुष्ठानप्रकाशः' (पृ. 68) में भी दी गयी है।

* यों तो शास्त्र में मानसपूजा के उपर्युक्त मन्त्रों के अलावा कौन सा स्तोत्र पढ़ना है इसका कोई उल्लेख नहीं मिलता तथापि ये दोनों स्तोत्र मानसपूजा को पुष्ट करने में सहायक हो सकेंगे, ऐसा सोचकर लेखक द्वारा उन्हें पढ़ने की सलाह दी गयी है। व्यक्ति अपनी रुचि के अनुसार कोई अन्य स्तोत्र भी पढ़ सकता है।

शिवमानसपूजास्तोत्र

रत्नैः कल्पितमासनं हिमजलैः स्नानं च दिव्याम्बरं
नानारत्नविभूषितं मृगमदामोदाङ्कितं चन्दनम्।
जातीचम्पकबिल्वपत्ररचितं पुष्पं च धूपं तथा
दीपं देव दयानिधे पशुपते हृत्कल्पितं गृह्यताम् ।। 1 ।।
सौवर्णे नवरत्नखण्डरचिते पात्रे घृतं पायसं
भक्ष्यं पञ्चविधं पयोदधियुतं रम्भाफलं पानकम्।
शाकानामयुतं जलं रुचिकरं कर्पूरखण्डोज्ज्वलं
ताम्बूलं मनसा मया विरचितं भक्त्या प्रभो स्वीकुरु ।। 2 ।।
छत्रं चामरयोर्युगं व्यजनकं चादर्शकं निर्मलं
वीणाभेरिमृदङ्गकाहलकला गीतं च नृत्यं तथा।
साष्टाङ्गं प्रणतिः स्तुतिर्बहुविधा ह्येतत्समस्तं मया
सङ्कल्पेन समर्पितं तव विभो पूजां गृहाण प्रभो ।। 3 ।।
आत्मा त्वं गिरिजा मतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं
पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थितिः।
सञ्चारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो
यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम् ।। 4 ।।
करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा
श्रवणनयनजं वा मानसं वापराधम्।
विहितमविहितं वा सर्वमेतत्क्षमस्व
जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शम्भो ।। 5 ।।
इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचिता शिवमानसपूजा समाप्ता।।

हे दयानिधे! हे पशुपते! हे देव! यह रत्ननिर्मित सिंहासन, शीतल जल से स्नान, नाना रत्नावलिविभूषित दिव्य वस्त्र, कस्तूरिकागन्धसमन्वित चन्दन, जुही, चम्पा और बिल्वपत्र से रचित पुष्पाँजलि तथा धूप और दीप यह सब मानसिक (पूजोपहार) ग्रहण कीजिये ।(1) मैंने नवीन रत्नखण्डों से रचित सुवर्णपात्र में घृतयुक्त खीर, दूध और दधिसहित पाँच प्रकार का व्यँजन, कदलीफल, शर्बत, अनेकों शाक, कपूर से सुवासित और स्वच्छ किया हुआ मीठा जल और ताम्बूल- ये सब मन के द्वारा ही बनाकर प्रस्तुत किये हैं, प्रभो! कृपया इन्हें स्वीकार कीजिये।(2) छत्र, दो चँवर, पंखा, निर्मल दर्पण, वीणा, भेरी, मृदङ्ग, दुन्दुभी के वाद्य, गान और नृत्य, साष्टाङ्ग प्रणाम, नानाविध स्तुति-ये सब मैं संकल्प से ही आपको समर्पण करता हूँ, प्रभो! मेरी यह पूजा ग्रहण कीजिये ।(3) हे शम्भो! मेरी आत्मा आप हैं, बुद्धि पार्वतीजी हैं, प्राण आपके गण हैं, शरीर आपका मन्दिर है, सम्पूर्ण विषय-भोग की रचना आपकी पूजा है, निद्रा

शिवापराधक्षमापनस्तोत्रम्

आदौ कर्मप्रसङ्गात् कलयति कलुषं मातृकुक्षौ स्थितं मां
विण्मूत्रामेध्यमध्ये क्वथयति नितरां जाठरो जातवेदाः।
यद्यद्वै तत्र दुःखं व्यथयति नितरां शक्यते केन वक्तुं
क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो ।। 1 ।।
बाल्ये दुःखातिरेको मललुलितवपुः स्तन्यपाने पिपासा
नो शक्तश्चेन्द्रियेभ्यो भवगुणजनिता जन्तवो मां तुदन्ति।
नानारोगादिदुःखाद्रुदनपरवशः शङ्करं न स्मरामि । क्षन्तव्यो। ।। 2।।
प्रौढोऽहं यौवनस्थो विषयविषधरैः पञ्चभिर्मर्मसन्धौ
दष्टो नष्टो विवेकः सुतधनयुवतिस्वादसौख्ये निषण्णः।
शैवीचिन्ताविहीनं मम हृदयमहो मानगर्वाधिरूढं । क्षन्तव्यो। ।। 3।।
वार्द्धक्ये चेन्द्रियाणां विगतगतिमतिश्चाधिदैवादितापैः
पापै रोगैर्वियोगैस्त्वनवसितवपुः प्रौढिहीनं च दीनम्।
मिथ्यामोहाभिलाषैर्भ्रमति मम मनो धूर्जटेर्ध्यानशून्यं । क्षन्तव्यो। ।। 4।।
नो शक्यं स्मार्तकर्म प्रतिपदगहनप्रत्यवायाकुलाख्यं
श्रौते वार्ता कथं मे द्विजकुलविहिते ब्रह्ममार्गे सुसारे।
नास्था धर्मे विचारः श्रवणमननयोः किं निदिध्यासितव्यं । क्षन्तव्यो। ।। 5।।
स्नात्वा प्रत्यूषकाले स्नपनविधिविधौ नाहृतं गाङ्गतोयं
पूजार्थं वा कदाचिद्बहुतरगहनात्खण्डबिल्वीदलानि।
नानीता पद्ममाला सरसि विकसिता गन्धपुष्पे त्वदर्थं । क्षन्तव्यो। ।। 6।।

समाधि है, मेरा चलना-फिरना आपकी परिक्रमा है तथा सम्पूर्ण शब्द आपके स्तोत्र हैं, इस प्रकार मैं जो-जो भी कर्म करता हूँ, वह सब आपकी आराधना ही है।(4) प्रभो! मैंने हाथ, पैर, वाणी, शरीर, कर्म, कर्ण, नेत्र अथवा मन से जो भी अपराध किये हों, वे विहित हों अथवा अविहित, उन सबको आप क्षमा कीजिये। हे करुणासागर श्रीमहादेव शंकर! आपकी जय हो।(5) (स्तोत्ररत्नावली)

✪✪✪✪✪✪✪

पहले कर्मप्रसङ्ग से किया हुआ पाप मुझे माता की कुक्षि में ला बिठाता है, फिर उस अपवित्र विष्ठा-मूत्र के बीच जठराग्नि खूब सन्तप्त करता है। वहाँ जो-जो दुःख निरन्तर व्यथित करते रहते हैं उन्हें कौन कह सकता है? हे शिव ! हे शिव ! हे शंकर! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरा अपराध क्षमा करो! क्षमा करो! (1) बाल्यावस्था में दुःख की अधिकता रहती थी, शरीर मल-मूत्र से लिथड़ा रहता था और निरन्तर स्तनपान की लालसा रहती थी; इन्द्रियों में कोई कार्य करने की सामर्थ्य न थी; शैवी माया से उत्पन्न हुए नाना जन्तु मुझे काटते थे; नाना रोगादि दुःखों के कारण मैं रोता ही रहता था, (उस समय भी) मुझसे शंकर का स्मरण नहीं बना, इसलिये हे शिव! हे शिव! हे शंकर! हे महादेव!

दुग्धैर्मध्वाज्ययुक्तैर्दधिसितसहितैः स्नापितं नैव लिङ्गं
नो लिप्तं चन्दनाद्यैः कनकविरचितैः पूजितं न प्रसूनैः।
धूपैः कर्पूरदीपैर्विविधरसयुतैर्नैव भक्ष्योपहारैः । क्षन्तव्यो॰ ॥ 7॥
ध्यात्वा चित्ते शिवाख्यं प्रचुरतरधनं नैव दत्तं द्विजेभ्यो
हव्यं ते लक्षसंख्यैर्हुतवहवदने नार्पितं बीजमन्त्रैः।
नो तप्तं गाङ्गतीरे व्रतजपनियमै रुद्रजाप्यैर्न वेदैः । क्षन्तव्यो॰ ॥ 8॥
स्थित्वा स्थाने सरोजे प्रणवमयमरुत्कुण्डले सूक्ष्ममार्गे
शान्ते स्वान्ते प्रलीने प्रकटितविभवे ज्योतिरूपे पराख्ये।
लिङ्गज्ञे ब्रह्मवाक्ये सकलतनुगतं शङ्करं न स्मरामि । क्षन्तव्यो॰ ॥ 9॥
नग्नो निःसङ्गशुद्धस्त्रिगुणविरहितो ध्वस्तमोहान्धकारो
नासाग्रे न्यस्तदृष्टिर्विदितभवगुणो नैव दृष्टः कदाचित्।
उन्मन्यावस्थया त्वां विगतकलिमलं शकरं न स्मरामि । क्षन्तव्यो॰ ॥ 10॥
चन्द्रोद्भासितशेखरे स्मरहरे गङ्गाधरे शंकरे
सर्पैर्भूषितकण्ठकर्णविवरे नेत्रोत्थवैश्वानरे।
दन्तित्वक्कृतसुन्दराम्बरधरे त्रैलोक्यसारे हरे
मोक्षार्थं कुरु चित्तवृत्तिमखिलामन्यैस्तु किं कर्मभिः ॥ 11 ॥
किं वानेन धनेन वाजिकरिभिः प्राप्तेन राज्येन किं
किं वा पुत्रकलत्रमित्रपशुभिर्देहेन गेहेन किम्।
ज्ञात्वैतत्क्षणभङ्गुरं सपदि रे त्याज्यं मनो दूरतः
स्वात्मार्थं गुरुवाक्यतो भज भज श्रीपार्वतीवल्लभम् ॥ 12 ॥
आयुर्नश्यति पश्यतां प्रतिदिनं याति क्षयं यौवनं

हे शम्भो! अब मेरा अपराध क्षमा करो! क्षमा करो!(2) जब मैं युवा - अवस्था में आकर प्रौढ़ हुआ तो पाँच विषयरूपी सर्पो ने मेरे मर्मस्थानों में डँसा, जिससे मेरा विवेक नष्ट हो गया और मैं धन, स्त्री और सन्तान के सुख भोगने में लग गया। उस समय भी आपके चिन्तन को भूलकर मेरा हृदय बड़े घमण्ड और अभिमान से भर गया। अतः हे शिव! हे शिव! हे शंकर! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरा अपराध क्षमा करो! क्षमा करो!(3) वृद्धावस्था में भी, जब इन्द्रियों की गति शिथिल हो गयी है, बुद्धि मन्द पड़ गयी है और आधिदैविकादि तापों, पापों, रोगों और वियोगों से शरीर जर्जरित हो गया है, मेरा मन मिथ्या मोह और अभिलाषाओं से दुर्बल और दीन होकर(आप) श्रीमहादेवजी के चिन्तन से शून्य ही भ्रम रहा है। अतः हे शिव! हे शिव! हे शंकर! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरा अपराध क्षमा करो! क्षमा करो!(4) पद - पद पर अति गहन प्रायश्चित्तों से व्याप्त होने के कारण मुझसे तो स्मार्तकर्म भी नहीं हो सकते, फिर जो द्विजकुल के लिये विहित हैं, उन ब्रह्मप्राप्ति के मार्गस्वरूप श्रौतकर्मों की तो बात ही क्या है? धर्म में आस्था नहीं है और श्रवण - मनन के विषय में विचार ही नहीं होता, निदिध्यासन(ध्यान) भी कैसे किया जाय? अतः हे शिव! हे शिव ! हे शंकर! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरा अपराध क्षमा करो! क्षमा करो!(5) प्रातःकाल स्नान करके आपका अभिषेक करने

प्रत्यायान्ति गताः पुनर्न दिवसाः कालो जगद्भक्षकः।
लक्ष्मीस्तोयतरङ्गभङ्गचपला विद्युच्चलं जीवितं
तस्मान्मां शरणागतं शरणद त्वं रक्ष रक्षाधुना ।। 13 ।।
करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा
श्रवणनयनजं वा मानसं वापराधम्।
विहितमविहितं वा सर्वमेतत्क्षमस्व
जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शम्भो ।। 14।।

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं शिवापराधक्षमापनस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

के लिये मैं गंगाजल लेकर प्रस्तुत नहीं हुआ, न कभी आपकी पूजा के लिये वन से बिल्वपत्र ही लाया और न आपके लिये तालाब में खिले हुए कमलों की माला तथा गन्ध-पुष्प ही लाकर अर्पण किये। अतः हे शिव! हे शिव ! हे शंकर! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरा अपराध क्षमा करो! क्षमा करो!(6) मधु, घृत, दधि और शर्करायुक्त दूध(पञ्चामृत) से मैंने आपके लिङ्ग को स्नान नहीं कराया, चन्दन आदि से अनुलेपन नहीं किया, धतूरे के फूल, धूप, दीप, कपूर तथा नाना रसों से युक्त नैवेद्यों द्वारा पूजन भी नहीं किया। अतः हे शिव! हे शिव ! हे शंकर! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरे अपराधों को क्षमा करो! क्षमा करो!(7) मैंने चित्त में आपके शिव नाम का स्मरण करके ब्राह्मणों को प्रचुर धन नहीं दिया, न आपके एक लक्ष बीजमन्त्रों द्वारा अग्नि में आहुतियाँ दीं और न व्रत एवं जप के नियम से तथा रुद्रजाप और वेदविधि से गङ्गातट पर कोई साधना ही की। अतः हे शिव! हे शिव! हे शंकर! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरे अपराधों को क्षमा करो! क्षमा करो!(8) जिस सूक्ष्ममार्गप्राप्य सहस्त्रदल कमल में पहुँचकर प्राणसमूह प्रणवनाद में लीन हो जाते हैं और जहाँ जाकर वेद के वाक्यार्थ तथा तात्पर्यभूत पूर्णतया आविर्भूत ज्योतिरूप शान्त परम तत्त्व में लीन हो जाता है, उस कमल में स्थित होकर मैं सर्वान्तर्यामी कल्याणकारी आपका स्मरण नहीं करता हूँ। अतः हे शिव! हे शिव ! हे शंकर! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरे अपराधों को क्षमा करो! क्षमा करो!(9) नग्न, निःसङ्ग, शुद्ध और त्रिगुणातीत होकर, मोहान्धकार को ध्वंस कर तथा नासिकाग्र में दृष्टि स्थिरकर मैंने (आप) शंकर के गुणों को जानकर कभी आपका दर्शन नहीं किया और न उन्मनी-अवस्था से कलिमलरहित आप कल्याणस्वरूप का स्मरण ही करता हूँ। अतः हे शिव! हे शिव ! हे शंकर! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरे अपराधों को क्षमा करो! क्षमा करो!(10) चन्द्रकला से जिनका ललाट-प्रदेश भासित हो रहा है, जो कन्दर्पदर्पहारी हैं, गङ्गाधर हैं, कल्याणस्वरूप हैं, सर्पों से जिनके कण्ठ और कर्ण भूषित हैं, नेत्रों से अग्नि प्रकट हो रही है, हस्तिचर्म की जिनकी कन्था है तथा जो त्रिलोकी के सार हैं, उन शिव में मोक्ष के लिये अपनी सम्पूर्ण चित्तवृत्तियों को लगा दे; और कर्मों से क्या प्रयोजन है?(11) इस धन, घोड़े, हाथी और राज्यादि की प्राप्ति से क्या? पुत्र, स्त्री, मित्र, पशु, देह और घर से क्या? इनको क्षणभङ्गुर जानकर रे मन! दूर ही से त्याग दे और आत्मानुभव के लिये गुरुवचनानुसार पार्वतीवल्लभ श्रीशंकर का भजन कर।(12) देखते-देखते आयु नित्य नष्ट हो रही है, यौवन प्रतिदिन क्षीण हो रहा है; बीते हुए दिन फिर लौटकर नहीं आते; काल सम्पूर्ण जगत् को खा रहा है। लक्ष्मी जल की तरङ्गमाला के समान चपल है; जीवन बिजली के समान चञ्चल है; अतः मुझ शरणागत की हे शरणागतवत्सल शंकर! अब रक्षा करो! रक्षा करो!(13) हाथों से, पैरों से, वाणी से, शरीर से, कर्म से, कर्णों से, नेत्रों से अथवा मन से भी जो अपराध किये हों, वे विहित हों अथवा अविहित, उन सबको हे करुणासागर महादेव शम्भो! क्षमा कीजिये। आपकी जय हो जय हो!!(14) (स्तोत्ररत्नावली)

(उपर्युक्त लेख मुख्यतः गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित कल्याण के 'शिवोपासनांक' तथा 'स्तोत्ररत्नावली', 'वीरमित्रोदयपूजाप्रकाशः' तथा 'आचारेन्दुः' पर आधारित है।)